शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

# भक्ति रस का उद्भव व विकास

डॉ. अमित प्रकाश पाण्डेय
सहायक आचार्य
ग्रीन फील्ड कालेज
सीतापुर, उत्तर प्रदेश, भारत

## शोध संक्षेप

*भक्ति के द्वारा भगवान भी भक्त के पराधीन हो जाते हैं। श्रद्धा, विश्वास, प्रेम से परिपूर्ण भक्त हृदय का मधुर मनोराग भक्ति है। जिसके द्वारा भक्त-भगवान या उपास्य-उपासक का पारस्परिक तादात्म्य स्थापित होता है। भक्ति ईश्वर ज्ञान का साधन, मुक्ति का हेतु, समाधिजन्य परमसुख के समान है। ईश्वर प्राप्ति के अन्य साधनों कर्म, योग, ज्ञान आदि का अन्तर्भाव भक्ति में ही किया जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में भक्ति व भक्ति रस से सम्बन्धित विषय का विशद विवेचन किया गया है।*

## भक्ति का स्वरूप

ईश्वर की प्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन तथा विश्व कल्याण का मुख्य द्वार भक्ति है। भक्ति ही बन्धनों से मुक्ति प्रदान करने वाली है। उसके बिना योग साधना भी व्यर्थ है, क्योंकि भक्तियुक्त ज्ञान ही ईश्वर प्राप्ति का साधन है। इस सबन्ध में गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा भी है- "जोग जग्य जप तप ब्रत कीन्हा। प्रभु कहँ देइ भगति बर लीन्हा।।"[1]

भक्ति शब्द की निष्पत्ति 'भज सेवायाम्' धातु से पाणिनी के सूत्र 'स्त्रियाँक्तिन्' [2] के अनुसार क्तिन् प्रत्यय से हुई है। भज्क्तिन्=भक्ति, भज् धातु का प्रयोग 'सेवा' अर्थ में होता है। विद्वानों ने साधन सामग्री बहुल सेवा को भक्ति कहा है 'तस्मात् सेवा बुधैः प्रोक्ता भक्ति साधन भूयसी।'[3] 'क्तिन्' प्रत्यय भाव अर्थ में प्रयुक्त होता है, किन्तु वैयाकरणों के अनुसार यहाँ कृदन्तीय प्रत्ययों के अर्थ परिवर्तन एक प्रक्रिया के अनुसार होते हैं। अतः वहीं 'क्तिन्' प्रत्यय अर्थान्तर में भी प्रयुक्त हो सकता है।

भक्ति विचारक ईश्वर प्राप्ति के चार प्रमुख साधन बताते हैं - ज्ञान, कर्म, योग तथा भक्ति। इन सभी में भक्ति को सर्वाधिक महत्वपूर्ण सिद्ध करते हुए कहा गया है - 'सा तु कर्मज्ञानयोगेभ्योऽप्यधिकतरा।'[4] भक्ति के स्वरूप को बताते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि वास्तविक रूप में मुझे भक्ति द्वारा ही जाना जा सकता है -

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यष्चास्मि तत्वतः।
ततो मां तत्वतो ज्ञात्वा विषते तदनन्तरम्।[5]

भागवत पुराण में भक्ति की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि सच्चे भक्त भक्ति की तुलना में ईश्वर प्रदत्त मुक्ति को भी हीन समझते हैं, क्योंकि भक्ति का आनन्द मुक्ति से श्रेष्ठ है -

न किचिंत्साध्वो धीरा भक्ताः ह्येकान्तिमो मम।

वाञ्छन्त्यापि मया दत्तम् कैवल्यमपुनर्भवम्।[6]

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

भक्ति सर्वोपरि है, ज्ञान और मोक्ष उसमें बाधक है, परन्तु भक्त युक्ति-मुक्ति सब छोड़ भक्ति को ग्रहण करता है। भक्ति लक्षण को बताते हुए कहा गया है -

अहैतुक्यव्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे
सालोक्य सार्ष्टिसामीप्यसारुप्यैकत्वमप्युत।
दीयमानं न गृहणान्ति बिना मत्सेवनं जनाः
स एव भक्ति योगाख्य अत्यधिक उदाहृतः।।[7]

श्रीमद्भागवत में ईश्वर को ही भक्ति का विषय स्वीकार करते हुए कहा है कि- तत्वज्ञानी जिस तत्व को केवल ज्ञान स्वरूप अथवा अद्वितीय और ज्ञान-स्वरूप तत्व कहते हैं, उसी का नाम ज्ञानियों के ब्रह्म, योगियों के यहाँ परमात्मा और भक्तों के यहाँ भगवान है, के अनुसार ज्ञान, मुक्ति और प्रीति का आलम्बन विभाव होने के कारण वह भगवान ही भक्ति रस का आलम्बन है -

वदन्ति तत्वस्वविदस्तत्वं यज्जानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमांत्मेति भगवानिति शब्द्यते।।[8]

उसके प्रति अपनी प्रतीति प्रगट करने वाले पुराण इतिहास प्रसिद्ध पात्र आश्रय हैं, भगवान की इन पात्रों पर जो कृपाएँ हुई हैं और इन पात्रों ने उस भगवान के प्रति जो समर्पण किए हैं, वे इस भक्ति रस के उद्दीपन विभाव हैं। भक्तों का प्रीतिमग्न होकर भगवद गुणानुवाद भगवन्नाम संकीर्तन आदि करते हुए तन्मय होकर स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, कम्प, विवर्णता, अश्रु और मूर्छा आदि हो जाना, उन्मत्त-सा होकर नाचने गाने लगना, रोने लगना आदि सभी अनुभाव हैं। इस विभाव, अनुभाव और संचारी भावों द्वारा जो भगवत प्रतीति रूपी स्थायी भाव श्रवण, कीर्तन और स्मरण क्षणों में भावुक भक्तों के हृदयों में अभिव्यक्त होता है उसे भक्ति रस कहते हैं।

भक्ति रस में उपर्युक्त भगवान महात्म्य की अनुभूति प्रधान होने पर शांत भक्ति रस कहलाता है। ईश्वर के साथ जीव का स्वामी-सेवक सम्बन्ध प्रतीत होने पर दास्य भक्ति रस तथा सखा भाव की प्रतीति में सख्य भक्ति रस होता है, किन्तु जब हम भगवान के बाल रूप के प्रति पुत्र शिष्यादि विषयक स्नेह का अनुभव करते हैं, तब वात्सल्य भक्ति रस हो जाता है और अपने में जब चेतना, कान्ताभाव का अनुभव करती हुई भगवान के कान्ताभाव की प्रतीति से परवश हो जाती है, तब माधुर्य भक्ति रस होता है।

श्रीमद्भगवद्गीता में कहे गये इन चार प्रकार के भक्तों के सम्बन्ध में आर्त भक्ति, जिज्ञासा भक्ति, अर्थार्थ भक्ति और ज्ञान भक्ति से भक्ति के चार भेद करते हुए कहा गया है-

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ।।[9]

अद्वैत सिद्धि के प्रणेता श्री मधुसूदन सरस्वती समाधिजन्य ब्रह्मानन्द और भक्ति रसास्वाद को समान मानते है -

समाधि सुखत्येव भक्तिसुखस्यापि स्वतंत्रपुरुषार्थत्वात...तस्मात् पुरुषार्थचतुष्टयान्तर्गतत्वेन वा स्वातन्त्रयेणावाङ्यं- भक्तियोगः पुरुषार्थः परमानन्द रूपत्वादिति निर्विणादम् ।[10]

आचार्य रूपगोस्वामी ने भक्ति को रसराट् मानकर अन्य शास्त्रीय रसों को इसी में अन्तर्भुक्त कर दिया है। रूपगोस्वामी ने 'भक्तिरसामृतसिन्धु में भक्ति रस को दो प्रधान वर्गो में विभक्त किया है - मुख्य भक्तिरस और गौण भक्ति रस -

रसस्य स्व प्रकाषत्वखण्डत्वं च सिद्धयति।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

पूर्व मुक्ताद् द्विधा भेदान्मुख्यगौणतया रते।।[11]

'ध्वन्यालोक' में भक्ति

भक्ति (रस) के विषय में सर्वप्रधान साहित्याचार्य आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक में वर्णन करते हुए कहा है-

स व्यापारवती रसान रसयितुं काचित्कवीनां नवा, दृष्टिर्या परिमिष्ठितार्थ विषयोन्मेषा च वैपश्चिती ते द्वे अप्यवलम्ब्य विश्वमनिषं निर्वर्णयन्तो वयं श्रान्ता नैव लब्धमब्धि शयनत्त्वदभक्ति तुल्यसुख्यम्।[12]

हरिभक्ति रसामृतसिन्धु के एक प्रकरण में शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य और माधुर्य नाम से भक्ति रस के पाँच भेदों का निरूपण किया गया है। शान्त भक्ति में ईष्वर के षड्विध ऐश्वर्य की अनुभूति मूल रूप में रहती है। अर्थात् समग्र ऐश्वर्य, समग्र धर्म, समग्र यश, समग्र श्री, समग्र ज्ञान और समग्र वैराग्य ये छः गुण भाग कहलाते हैं और इन्ही छः गुणों के कारण ईश्वर को भगवान कहते हैं।

भक्ति के सम्बन्ध में श्रीमद्भागवत में कपिल मुनि अपनी माता देवहुति से कहते हैं- मेरे गुणों के श्रवण मात्र से मुझ सर्वान्तर्यामी में समुद्रोन्मुख गंगा के प्रवाहवत् मन की अविच्छिन्न गति हो जाना तथा मुझे पुरुषोत्तम में अकारण और अनन्य प्रेम हो जाना मेरे निर्गुण भक्तियोग का लक्षण कहा गया है -

मद्गुणश्रुतिमात्रेण मयि सर्वगुहाषये।
मनोगतिरविच्छिन्ना यथा गंगाम्भसोऽम्बुधौ।।
लक्षणं भक्तियोगस्य निर्गुणस्य ह्मुदाहृतम्।
अहेतुक्य वहिता या भक्तिपुरुषोत्तमे।।[13]

नारद सूक्त में भक्ति

नारद भक्ति सूत्र में पूजा या अर्चना के लिए भक्ति शब्द का प्रयोग होता है। नारद भक्ति सूक्त में कहा गया है कि वह (भक्ति) तो परमेश्वर में परम प्रेम रूप है - 'सा त्वास्मिन् परमप्रेमरूपा।।[14] भारतीय धर्म दर्शन तथा ज्ञान का मूल स्रोत वेद ही है। संसार के सम्पूर्ण ज्ञान का बीज वेदों में ही उपलब्ध होता है। वेद व्याख्याकार सायण के अनुसार, "भक्ति का अर्थ अन्न होता है किन्तु सूर्योदय से केवल अन्न प्राप्ति ही नहीं सम्भव है अपितु संध्या उपासना कर्म भी सम्भव है।" 'अतो भक्तेन गमेमहि' इस भजन कर्म के द्वारा संगत होता है यह अर्थतः सूर्य और ऊषा दोनों की युगल उपासना के बीज वेदों में प्राप्त होता है।"[15] वेदों में रस शब्द का उल्लेख प्राप्त होता है। अतः वेदों में प्रयुक्त 'रस' शब्द अर्चावाचक या भक्तिवाचक अर्थ में ग्रहण होता है, इस प्रकार यदि वेदों में रस शब्द ही भक्तिवाचक है तो वेदों में भक्ति की अनुपलब्धि कैसे सम्भव है। ऋग्वेद के विभिन्न मंत्रों में भक्ति के विभिन्न भेदों के उदाहरण प्राप्त होते हैं। जिस प्रकार ईश्वर सर्वव्याप्त है, उसी प्रकार वेद शब्द रूप में सर्वत्र व्याप्त है, जिसका दर्शन भक्ति द्वारा सम्भव है। इस प्रकार सम्पूर्ण ज्ञान के समान भक्ति तथा भक्ति रस का मूल वेद ही है।

शास्त्रों व धार्मिक दार्शनिक सम्प्रदायों में आगम संहिता या तन्त्र नाम से प्रसिद्ध है। वेदों तथा ब्राह्मणों के ज्ञान, कर्म तथा भक्ति रूप तीनों काण्डों में उपासना (भक्ति) प्रतिपादित है, उसका पूर्ण विकास आगम ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। सख्य भाव की भक्ति नारद पांचरात्र के गोपाल स्तोत्र में प्राप्त होती है। इसमें भक्ति रस का विशद प्रतिपादन हुआ है -

ब्रजगोपालिका चतो मोहयन्तं पुनः पुनः।
वल्लभीवदनाम्भोजमधुपानमधुव्रतम्।।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

क्षोभयन्तः मनस्तासां सम्मेरापाङ्गवीक्षणैः।
यौवनोद्भिन्नदेहाभिः संसक्ताभिः परस्परम् ।।
विचित्राम्बरभूषणाभिर्गोपनारीभिरावृत्तम् ।।[16]

माहेश्वर तन्त्र में सगुण निर्गुण रूप में रसालम्बन वर्णित है। हनुमत संहिता में भक्त राम को साक्षात् परमात्मा मान उनका नित्य भजन करता हुआ मुख्यतः शांत भक्ति रस में निमग्न रहता है। इसके अतिरिक्त ब्रह्म संहिता, शुक संहिता, लोभ संहिता, शिव संहिता तथा गर्ग संहिता में विशेष रूप से भक्ति रसपूर्ण वर्णन किया गया है।

## पुराणों में भक्ति

सहृदयों को आनन्ददायी रूप में कथाओं के द्वारा उसका पूर्ण विकास पुराणों में प्राप्त होता है। वैष्णवों को परमप्रिय श्रीमद्भागवत पुराण का मुख्य प्रतिपाद्य भगवदभक्ति ही है। वास्तव में इसे भक्ति प्रतिपादक काव्य कहना उपयुक्त होगा, क्योंकि नवधा भक्ति की आधारभूत भगवत्कथा भागवत में ही वर्णित है, जिसके श्रवण मात्र से ही भक्त समाधि सुख का अनुभव करते हैं। इसी कारण भक्ति रसज्ञों की दृष्टि में भी यह कथा महत्वपूर्ण स्थान रखती है-

'लीलाकथारसनिषेवणमन्तरेण
पुंसोभवेद्विविधदुःखदवार्दितस्य।[17]

भागवत पुराण में भक्ति रस बहुधा निरूपित है। न केवल भागवत पुराण में ही अपितु स्कन्ध पुराण, पद्म पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, अग्नि पुराण, शिव पुराण, गरुड़ पुराण, विष्णुधर्मोत्तर पुराण इत्यादि अन्य पुराणों में भी भक्ति का श्रेष्ठतम आस्वादनीय रूप में प्रतिपादन किया है। पद्म पुराण में भक्ति रस को प्रतिपादित करते हुए पातालखण्ड में कहा गया है कि "जब तक मनुष्य अर्थात् भक्त परमानन्द रूप साक्षात् अमृतय भक्ति रस का आस्वाद नहीं करते हैं, तब तक वृद्धावस्था, मृत्यु व जन्म रूप दुःखों को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार भक्ति रस के आस्वाद मात्र से सर्वथा मुक्ति प्राप्त होती है।'

लौकिक साहित्य का आविर्भाव महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण से होता है। यही कारण है कि महर्षि वाल्मीकि को आदि कवि और रामायण को आदिकाव्य के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है, जिसे विद्वानों ने शोक से पूर्ण कहा, रामायण में कहा गया है -'शोकार्तस्य प्रवृत्तो मे श्लोको भवतु नान्यथा।'[18] ध्वन्यालोककार आनन्दवर्धन ने रामायण में करुण रस की प्रधानता मानी है, यद्यपि रामायण में छः रसों का प्रयोग किया गया है -

रसैः शृंगारकरुणहास्यरौद्रभयानकः।
वीरादिभी रसैर्युक्तं काव्यमेतदगायताम् ।।[19]

रामायण का अध्ययन करने पर उसमें विभिन्न स्थलों पर विभिन्न रसों की समयानुसार प्रतीति होती है, परन्तु रावणवध के उपरान्त ब्रह्म स्तुति में शबरी सुतीक्ष्ण आदि कृत स्तुति में भक्ति रस का आस्वादन होता है।

व्यास द्वारा रचित महाभारत में मुख्य रूप से वीर रस की स्थिति माननी चाहिए, परन्तु आनन्दवर्धनाचार्य ने महाभारत में शांत रस को प्रधान रस माना है। महाभारत में भगवान की लीला, गुण, चरित्र आदि का कीर्तन है, जैसे भागवत आदि पुराणों में भक्ति तत्व अथवा भक्ति रस प्रधानता से वर्णित है, उनमें ईश्वर के गुण आदि का कीर्तन है, उसी प्रकार महाभारत में भी भक्ति रस की प्रधानता सिद्ध होती है। महाभारत की अङ्गभूत भगवद्गीता में भक्ति की एकान्तिका तथा अनन्यता पर विशेष बल दिया गया है और इस प्रकार भक्ति रस की साक्षात्

निर्झरिणी प्रवाहित होती है। भक्ति के विषय में श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है कि जो प्रेमपूर्वक मेरी भक्ति करने में सदैव लीन रहते हैं, उन्हे मैं तत्वज्ञान रूप देता हूँ, जिससे वे मुझको ही प्राप्त होते हैं -

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते।।[20]

निष्काम भाव से भक्ति के विषय में श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो अनन्यप्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वर को निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भाव से भजते हैं, उन नित्य-निरन्तर मेरा चिन्तन करने वाले पुरुषों को योगक्षेम मैं स्वयं प्राप्त कर देता हूँ-

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्यपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।।[21]

भगवत्स्वरूप की प्राप्ति का नाम 'योग' है और भगवत्प्राप्ति के निमित्त किए हुए साधन रक्षा का नाम 'क्षेम' है। श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने स्वयं को क्रतु, यज्ञ, स्वधा, औषधि, मन्त्र, घृत, अग्नि व हवन रूप क्रिया कहा है तथा इस सम्पूर्ण जगत को धारण करने वाला एवं कर्मों के फल को देने वाला पिता, माता, पितामह, जानने योग्य पवित्र ओंकार तथा ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद भी स्वयं को ही कहा है -

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ।।
पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः।
वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक्साम यजुरेव च।।[22]

काव्यशास्त्रियों के द्वारा भक्ति को स्वतन्त्र रस के रूप में नहीं स्वीकारा गया है। रसशास्त्र के प्रथम विचारक भरत मुनि ने भी अपने ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में भक्ति के विषय में मौन धारण किया है। उनके द्वारा तो भक्ति को रस भाव इत्यादि किसी भी रूप में स्वीकार नहीं किया गया है। उनके अनुसार रति आदि सभी भाव शांत से उत्पन्न होते हैं तथा कारण का अभाव होने पर पुनः शांत में ही विलीन हो जाते हैं।[23] शांत रस के प्रसंग में अभिनवभारती में कहा गया है कि निराकारोपासना तथा साकार उपासना का आलम्बन साक्षात् सच्चिदानन्द ब्रह्म ही है। अतः भक्ति व ज्ञान का अंतर्भाव शांत रस में ही करना चाहिए- 'ईश्वरप्राणिधानविषय भक्ति श्रद्धे।'[24] भामह ने अपने ग्रन्थ काव्यालंकार में सर्वप्रथम प्रेयो नामक अलंकार के विषय में उल्लेख किया था।[25] दण्डी ने भक्ति के विषय में बताया कि परमात्मा के विषय में परम प्रीति ही भक्ति है - 'भक्तिभगवद्विषये परमप्रीतिः।[26] समस्त वैष्णव आचार्यों में भक्ति रस के मूल प्रस्थापनाचार्य माने जाने वाले रूपगोस्वामी ने भक्ति रस को स्वतन्त्र रस मानते हुए इसका सांगोपांग विवेचन किया है। इनके मतानुसार भक्ति रस ही सर्वश्रेष्ठ रस है। इसका किसी अन्य रस में अन्तर्भाव सम्भव नहीं। यह वास्तविक एवं मूल रस है। रूपगोस्वामी ने अपने वैदुष्यपूर्ण ग्रन्थों[27] में भक्ति रस को महारस एवं 'भक्तिराज रस' कहकर सम्बोधित किया है। आधुनिक विद्वानों में कन्हैयालाल पोद्दार ने श्रन्गारादि रसों की अपेक्षा भक्ति को सर्वश्रेष्ठ बताया है। प्राचीनों में अग्निपुराणकार ने तो भक्ति को मुमुक्षुओं के द्वारा उपासना योग्य बताया है।[28]

परमप्रेमरूप परमानन्द भक्ति रस के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए मधुसूदन सरस्वती ने अपने ग्रन्थ में लिखा है- 'परमानन्द रस स्वरूप परमात्मा ही द्रवित चित्तवृत्ति के द्वारा प्रतिबिम्बित होकर स्थायी भाव को प्राप्त कर रस होता है।'[29]

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

## निष्कर्ष

भक्ति सर्वत्र व्याप्त होती है, केवल उसकी अभिव्यक्ति सहृदय भक्तों के हृदय में ही होती है। भक्ति के द्वारा भक्त माया इत्यादि सभी प्रपंचों से रहित हो शुद्ध नित्य रूप में चैतन्य स्वरूप परमात्मा के दर्शन करता है, उस समय उसके द्वारा भक्ति रस का आस्वाद प्राप्त किया जाता है, जिससे भक्त भगवद् महिमा का गुण कीर्तन करता हुआ इस माया-मोहरूपी जगत से विरत हो परमेश्वर के चरणों में स्थान प्राप्त कर अपने जीवन के परम लक्ष्य की प्राप्ति में सक्षम होता है।

## सन्दर्भ ग्रन्थ

*1. रामचरितमानस, अरण्यकाण्ड चौ. 38 टीकाकार हनुमान प्रसाद पोद्दार*
*2. अष्टाध्यायी 3.3.94*
*3. गरुड़ पुराण 2/9*
*4. नारदभक्ति सूत्र 25*
*5. श्रीमद्भगवद्गीता 18/55*
*6. भागवतपुराण 11/20/34*
*7. वही 3/29/11-14*
*8. भागवत 1/2/11*
*9. श्रीमद्भगवद्गीता 7/16*
*10. भक्तिरसायन, प्रथमोल्लास, पृष्ठ 6*
*11. भक्तिरसामृतसिन्धु दक्षिण विभाग ,पंचम लहरी कारिका 6,94*
*12. ध्वन्यालोक, पृष्ठ 226*
*13. श्रीमद्भागवत् 3/29/11-12*
*14. नारदभक्तिसूत्र - 2,पृ.1*
*15. रसविमर्श: पृष्ठ 190*
*16. नारदपांचरात्र-गोपाल स्तोत्र-4/6/5*
*17. श्रीमद्भागवत् 12/4/40*
*18. वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड द्वितीय सर्ग श्लोक 18*
*19. वही, चतुर्थ सर्ग श्लोक 9*
*20. श्रीमद्भगवद्गीता 10/10*
*21. वही 9/22*
*22. वही 9/16-17*
*23. नाट्यशास्त्र, पृष्ठ 778*
*24. अभिनवभारती-777*
*25. काव्यालंकार 3/5 पृष्ठ 130*
*26. काव्यादर्श 2/275 पृष्ठ 166*
*27. श्री हरिभक्ति रसामृत सिन्धु उज्ज्वलनीलमणि नाट्यचन्द्रिका*
*28. अग्नि पुराण 339/2*
*29. भक्ति रसायन 1/10 पृष्ठ 30*